अध्याय चौदवाँ

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढाय नमः॥

"हे पुण्यवान शरीर होने वाले, कमल के पँखुडियों के समान आँखे होने वाले सतगुरुनाथजी, अखिल ब्रह्मांड के सूत्र आपके हाथ में होकर आप दीन जनों के लिए वंदनीय हैं। वेदों में जिसकी सराहना की गयी है, ऐसी सराहना के आप सुपात्र होते हुए सर्वव्यापी तथा पवित्र हैं। मेरे हृदय में स्थित अज्ञान के अंधेरे का विनाश करने वाले सूर्य तथा सच्चरित्र होने वाले गुरुदेवजी, आप मेरी रक्षा कीजिए।"

मुमुक्षुओं का पुण्यफल मानो आपका शुभ शरीर ही है। मुमुक्षु अगर आप से फिर एक बार जन्म लेने की प्रार्थना करेंगे, तो आप अपनी लीलाएँ दिखाने के लिए ऐसा जन्म लेंगे। अगर पलभर के लिए भी आप की संगती का लाभ होगा, तो भी निश्चित रूप से मनुष्य के भवबंधन टूट जाएँगे और हृदय में ब्रह्मज्ञान प्रकट होगा। हे सिद्धारूढ़जी आप जैसा इस त्रिभुवन में कोई नहीं है, इसीलिए कुंठित हुयी मेरी मति आप का वर्णन करने में असमर्थ है। तीर्थयात्रा करने से कुछ समय के उपरांत उसका पुण्य प्राप्त होता है, परंतु आप के दर्शन करने से, श्रुतियों में दिए हुए वर्णन के अनुसार, तत्काल उत्तम फल की प्राप्ति होती है। हालाँकि, आप निर्गुण हैं, फिर भी भक्तगणों का उद्धार करने हेतु आप ने शरीर धारण किया है, इसलिए आपकी जीवनी अत्यंत पवित्र है। जब जब भक्तों पर संकट आएंगे, तब तब उनकी सहायता के लिए तुरंत उपस्थित होने का निश्चय करके ही आप शरीर धारण करके इस लोक आये हैं। आप भक्तों का रक्षण करते हैं, उसके उपरांत वे सत्कर्म या सेवा करने लगते हैं, जिससे उनका चित्त शुद्ध होता है और वे ज्ञान के अधिकारी बनते हैं। हे सतगुरुमाता, दुर्जनों को भी पार लगाने के उपाय आप ढूँढ निकालते हैं और उन्होंने आप को पीड़ित करने के पश्चात भी दयालु होकर आप उनका उद्धार करते हैं। ऐसी ये दयालु गुरुमाता, सभी को कृपा की छाँव देती हैं, श्रोतागण, अब अगली कथा सुनिए।

सागर किनारे कुमठा (ये गाँव दक्षिण कर्नाटक जिले में आता है) नाम का एक गाँव था, वहाँ हरिहर नाम का एक गरीब ब्राह्मण रहता था। वह और

उसकी पत्नी सरस्वती, हमेशा कृष्णभक्ति में तल्लीन रहते थे| प्रतिदिन श्रीकृष्ण भगवान का भजन पूजन तथा नामजप करने के कारण उनका चित्त शुद्ध हो गया| जिससे यथावकाश उनके मन में वैराग्य की भावना निर्माण होकर, सांसारिक कर्मकांडों से वे ऊब गये। सांसारिक दुखों से पीड़ित होने के कारण वह जोड़ा मन ही मन तड़पते हुए कहता था, की हे श्रीहरि, हमारी समझ में नहीं आ रहा है की हम क्या करें, अब आप ही हमें इस दुखों से छुडाईए। जब उन्होंने सुना की हुबली में सिद्धारूढ़ स्वामीजी नाम का कोई महात्मा है, जिन्हें सभी लोग साक्षात ईश्वर का अवतार समझते हैं, तब वे दोनो घरगृहस्थी का मोहपाश छोड़कर हुबली जाने के लिए चल पड़े। हुबली पहुँचकर वे लोगों से पूछने लगे की, अभिमानरहित होकर शरणागत हुए दीन तथा अनाथों का प्रतिपाल करने वाले सिद्धनाथजी कहाँ निवास करते हैं। लोगों ने उन्हें सिद्धाश्रम का मार्ग दिखाया, जहाँ भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने वाले कल्पवृक्ष के समान तथा उनके हृदय में आत्मा के रूप में बसने वाले और भवसागर को पार करते समय होने वाले कष्टों का नाश करने वाले सिद्धनाथजी वहाँ थे। हरिहर और सरस्वती बड़ी तेजी से सिद्धाश्रम पहुँचे और उस परिसर की शोभा देखकर आनंदित हुए। जिनके चेहरे पर फैला हुआ आत्मज्ञान का प्रभामंडल देखते ही त्रिविध (आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक) तापों का हरण होता है ओर जिनके दर्शन मात्र से अनगिनत जन्मों के पाप भस्म होते हैं, ऐसे सतगुरुजी का सगुण रूप उन्होंने देखा। उनका निर्मल चेहरा देखते ही उस जोड़े ने उनके चरणों में सिर रखकर उन्हे प्रणाम किया, तत्क्षण उनकी आँखे आसूओं से डबडबायी| स्नेहपूर्ण तथा करुणासागर गुरुनाथजी ने उन्हें उठाकर पूछा, "हे सज्जन दंपति, आप कहाँ से पधारे हैं? आप क्या चाहते हैं?" हरिहर ने कहा, "हम दोनों आपके दर्शन हेतु यहाँ दौड़े चले आये हैं। आप दयालु सतगुरुजी हैं, गृहस्थी करते करते थक जाने के कारण और सिवाय आपके अन्य कोई भी उस से छुटकारा दिलाने में समर्थ न होने के कारण, हम आप की शरण में आये हैं। दुखभरे इस सांसारिक जीवन से पार होने का कोई भी उपाय न मिलने के कारण, हमने आपके चरणों का सहारा लिया हैं, इसलिए हे सतगुरुनाथजी, कृपा करके आप ही हमें पार लगाईए।" उनके ये करुण शब्द सुनकर सतगुरुमाता का हृदय पिघल

गया और उन्होंने उन्हें आश्वासित करते हुए कहा, "भयभीत मत होईए," उससे दोनो आनंदित हुए। तब से सिद्धजी की आज्ञा के अनुसार वे प्रतिदिन शरीर का अभिमान त्यागकर निर्वाह के लिए भिक्षा माँगने लगे। उनका सतगुरुजी से हुआ अद्‌भुत प्रेम देखकर सब लोग आश्चर्य व्यक्त करने लगे और कहने लगे की इन दोनों ने दयाघन सिद्धनाथजी से रिश्ता जोड़ लिया है।

इस प्रकार एक वर्ष समाप्त हुआ, उसी समय किसी अनिवार्य कार्य से उन्हें वापस कुमठा जाना पड़ा। आश्रम छोड़ते समय सतगुरुजी के बिरह की केवल कल्पना मात्र से तड़पते हुए वे आसू बहाने लगे और सिद्धनाथजी से बिनती करने लगे की वे उन्हें जल्द से जल्द बुलवा लें। सतगुरुजी ने कहा, "आप किसी भी प्रकार की चिंता मत कीजिए। आप निरंतर गुरुचिंतन करते रहिए ताकि मार्ग में किसी प्रकार का भय महसूस नहीं होगा। मैं हमेशा आप के साथ हूँ ये बात पक्की है, यह जानते हुए निर्भय होकर अहर्निश नाम जपते जाईए।" गुरुनाथजी की मधुर वाणी सुनकर वह जोड़ा हर्षित हुआ और उनके चरणों में सिर रखकर प्रणाम करने के पश्चात कुमठा निकल पड़ा। चलते चलते मार्ग में वे दोनों ईश्वर का नाम जपते जपते मन ही मन सिद्धनाथजी का ही प्रेमपूर्वक चिंतन कर रहे थे। चलते चलते मार्ग में एक भयंकर जंगल से उन्हें गुजरना पड़ा। मार्ग के दोतरफा घने पेड़ होने के कारण दिनदहाड़े पूरा अंधेरा छाया हुआ था तथा बहुत कम प्रकाश था। हालाँकि उन्हें भीषण जंगली जानवरों की गर्जनाएँ सुनाई दे रही थी, फिर भी वे निर्भयता से भजन करते हुए धीरे धीरे मार्ग से चल रहे थे। किसी कारणवश पति पिछे रह जाने के कारण, अपने आप को भूलकर नामजप करती हुई पत्नी आगे चल रही थी। इतने में मार्ग के एक तरफ से, घने पेड़ों के बीच से निकलकर एक भयानक शेर सरस्वती के सामने कुछ दूरी पर आकर खड़ा हुआ और उसे निहारने लगा। हालाँकि सरस्वती अपने आप को भूलकर चल रही थी, फिर भी अचानक आँखे खोलकर देखते ही सामने एक भयानक शेर को देखकर वही की वही पथरा गई। शेर की भयानक दहाडों से सभी दिशाएँ व्याप्त हो गई। भीषण दहाड़ों को सुनकर वह महिला थर थर काँपने लगी और उसका कलेजा पसीज गया। परंतु उसी समय उसे गुरुवचनों का स्मरण हुआ। जैसे ही शेर छलाँग लगाता हुआ उसके समीप आया, उसने

श्रीगुरुमहाराजजी को अति दीनतापूर्वक आवाज दी, "हे दयालु गुरुनाथजी, दौड़कर आईए और मेरी रक्षा कीजिए।" उसी क्षण सिद्धनाथजी वहाँ प्रकट हुए और उसके पीछे खड़े होते हुए उसके कंधे पर हाथ रखकर बोले, "बेटी, भयभीत मत हो।" सिद्धनाथजी ने दूसरा हाथ उठाकर शेर को "वहीं रुक जा" कहकर आज्ञा की। उस दिव्य महात्मा को देखते ही शेर जमीन पर गिर गया। इतने में उस महिला के पति ने सतगुरुनाथजी को देखा और कहा, "हे सिद्धनाथजी, दीनानाथ, आप ऐन संकट के समय यहाँ आये और हमारी रक्षा की|" भयग्रस्त हुई सरस्वती बेहोश होकर गिरने वाली ही थी की सिद्धजी ने उसे थाम लिया, उस समय सतगुरु महाराजजी को देखकर उस दंपति के नयनों से अश्रु बहने लगे। उन्होंने कहा, "हे करुणाकर दयाघन, ऐन मौके पर आप पधारे। हमारी काया आपपर न्योछावर कर देंगे। हम आप को हुबली में ही छोड़कर निकले पड़े थे, फिर भी संकट के समय आप हमारे लिए यहाँ कैसे पहुँचे?" भक्तों के ये शब्द सुनकर सतगुरुजी ने कहा, "मैं ने आप को वचन दिया था की मैं हमेशा आप के साथ रहूँगा। जहाँ मेरे भक्त होते हैं और जो निरंतर मेरा स्मरण करते हैं, मैं हमेशा उनके साथ होते हुए उनका समर्थक बनता हूँ। आप बिलकुल भी मत घबराईए।" ऐसा वह कह ही रहे थे की वह शेर झट् से उठकर उन के पास आया, उसे देखकर वे दोनो, सिद्धनाथजी के पीछे जाकर खड़े हुए। सिद्धनाथजी आगे चलकर उस शेर के पास पहुँचे और उन्होंने उसकी पीठ थपथपायी; उसी क्षण वह शेर, पालतू कुत्ते की भाँति दीन होकर उनके चरणों में गिर गया। उसे देखकर वह दंपति निर्भय होकर आगे बढ़े। सिद्धनाथजी उस शेर के कान में कुछ बुदबुदाये, उसी पल वह जंगली जानवर हुंकार कर जंगल में चला गया। उस के बाद सिद्धनाथजी उस दंपति के साथ कुछ कदम चले और उन्हें फिर से आश्वासित करके अंतर्धान हो गये। हर्षित हुआ वह जोड़ा, सिद्धारूढ़जी का स्मरण करते हुए, आराम से सुबह तक कुमठा पहुँच गया। वहाँ का कार्य जल्द से जल्द पूरा करके वे दोनो फिर से हुबली लौटे। मार्ग में उन्होंने जहाँ शेर देखा था, वे वहाँ पहुँचते ही, वही शेर उन्होंने फिर से वहाँ देखा। परंतु उस शेर में उन्हें क्रूरता के कोई भी लक्षण दिखाई न पड़े। उन्हें देखते ही शेर जमीन पर लेट गया। लेकिन मन में संदेह आने के कारण, वे दोनो, वही पर खड़े हुए, लेकिन शेर अपनी जगह से न हिला

हुआ देखकर, वे आगे बढ़े। शेर ने दीनतापूर्वक उनकी ओर देखा। हरिहर ने कहा, "हालाँकि शेर में क्रूरता के कोई भी लक्षण दिखाई नहीं पड़ रहे हैं, न जाने वह क्या कर बैठे! सतगुरुजी को ही हमारी रक्षा करनी होगी।" ऐसा कहते हुए शेर के पहुँचते ही, शेर उसके चरणों में गिर गया और कुछ देर शांत रूप धारण करने के पश्चात उनके आगे आगे चलने लगा। उसके बाद, उस जोड़े को प्रणाम करके वह शेर जंगल में चला गया। वे दोनों निश्चिंत हो गये। इस घटना से वे दोनो दंग रह गये और 'सतगुरुजी की महिमा का बयान करना असाध्य है' कहते हुए हुबली को ओर निकल गये। मठ पहुँचते ही अति आनंदित होकर जब उन्होंने सतगुरुजी के चरणों में सिर रखकर प्रणाम करके कहा, "हे भक्तसखा, आप धन्य हैं। भक्तों की रक्षा करने हेतु आप हर जगह उपस्थित होते हैं। हालाँकि, आप शरीर से मठ में उपस्थित होते हुए भी, जंगल में सरस्वती का शिकार करने हेतु अचानक शेर के आते ही, वहाँ प्रकट होकर आप ने हमारी रक्षा की।" मानो घटी हुई घटना के बारे में वे पूरी तरह से अनभिज्ञ है ऐसा दिखलाते हुए जब सतगुरुजी ने उनसे पूछताछ करते ही हरिहर ने उस घटी हुई घटना का बयान किया, उसे सुनते ही सभी भक्त आश्चर्यित हो गये। पूरा विवरण सुनकर सिद्धनाथजी ने कहा, "सच कहा जाये तो गुरुचरणों पर होने वाली श्रद्धा (भाव) ही तारक होती है। श्रीगुरुनाथजी समर्थ होते हुए हमेशा भक्तों की सहायता के लिए जागृत रहते हैं।" उस दंपति का अनुभव सुनकर सभी ने मिलकर सतगुरुजी की जयजयकार की। सतगुरुजी की अपार महिमा अवर्णनीय होते हुए उनकी कीर्ति से सारी चराचर सृष्टि भरी है। उसके पश्चात वे दोनो सुख से रहने लगे और सतगुरुजी चरणों का ध्यान करते हुए जीवन बिताने लगे। ऐसी त्रिभुवन में स्थित सभी को सर्वकाल पावन करने वाली कथा श्रोतागणों ने सुनी। अवतारी व्यक्तियों का व्यवहार, सगुण हो या निर्गुण, दोनो ही स्थितियों में एक जैसा होता है। उनके सगुण रूप का वर्णन तथा लीलाएँ सुनते ही तत्काल मन को शांति मिलती है। परंतु मुमुक्षु लोगों की लक्ष्यप्राप्ति के लिए ऐसे महात्माओं का निर्गुण जीवन चरित्र ही बयान करना चाहिए। श्रोतागण, इसीलिए, इस कहानी के लक्ष्यार्थ की ओर ध्यान दीजिए, क्योंकि यह कथा सुनने से भी मन निर्मल होकर हृदय में ज्ञानज्योति जल उठेगी।

यह एक रूपकसंबंधी कथा है। तीव्र वैराग्य यह पति तथा विमल शांति यह पत्नी, ऐसा ये जोड़ा सिद्धनाथजी की आज्ञा से भवारण्य (या भवसागर) पार करने हेतु निकल पड़े। ये जोड़ा भवारण्य में चैन से संचार करते समय, सामने से क्रोध रूपी शेर आया और उसने शांति रूप पत्नी को निगल ने का प्रयास करते ही उसने सतगुरुजी का स्मरण किया। तत्काल हृदय में सतगुरुजी प्रकट हुए। उसी पल क्रोध शांत हुआ, जिससे शांति तथा वैराग्य इन दोनों की रक्षा हुयी और जिन्होंने ही आगे उस जोड़े को आत्मसुख तक पहुँचाया। एक बार आत्मानुभव (आत्मज्ञान) होने के पश्चात वह जोड़ा फिर भवारण्य में संचार करने निकले होते हुए, जब उसी क्रोध से उनकी भेंट होने के बावजूद भी वे दोनो शांत ही रहे। इस प्रकार सतगुरुजी की संगती से संकटों का निवारण होता है। सतगुरुनाथजी यह स्वयं देवाधिदेव हैं और उन्हीं के हृदय में सभी ब्रह्मांड बसते हैं, जो अपूर्व तथा शाश्वत हैं। ईश्वर भी इनके सत्ताधीन होने के अलावा, ये अपनी सत्ता से ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर इन त्रिमूर्तियों को खिलाते हैं। ईश्वर सभी को बंधन में बाँधते हैं परंतु आखिर दयासागर सतगुरुजी इस मृत्युलोक पधारकर प्रत्येक शरणागत को मुक्त करते हैं। जिस सतगुरुजी की महिमा का बयान करना हजारो फनोंवाले शेषनाग के जिव्हाओं से भी मुमकिन नहीं हुआ, वहाँ मेरे जैसा मतिमंद उनका जीवन चरित्र क्या बयान कर पाऊँगा! श्रोतागण, अब सावधानी से अगली कथा सुनिए, जिसे सुनने से मोह नष्ट होकर निर्मल ज्ञान प्रकट होगा। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह चौदवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥